National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(61): 139-145
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

जिज्ञासा ठाकुर
शोध छात्रा, विकृत विज्ञान विभाग,
आयुर्वेद संकाय, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय,
वाराणसी, भारत

आचार्य इन्द्रजीत शर्मा
टीचिंग एसोसियेट, प्राच्य अध्ययन,
धर्म अध्ययन एवं दर्शन विभाग,
देव संस्कृति विश्वविद्यालय हरिद्वार,
उत्तराखंड भारत-249411

Correspondence:
जिज्ञासा ठाकुर
शोध छात्रा, विकृत विज्ञान विभाग,
आयुर्वेद संकाय, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय,
वाराणसी, भारत

गायत्री मन्त्र चिकित्सा द्वारा मानसिक स्वास्थ्य प्रबंधन

आचार्य इन्द्रजीत शर्मा, जिज्ञासा ठाकुर

सारांशः

सनातन धर्म-संस्कृति का आधार और विज्ञान, वर्ण अक्षरों की प्राकृतिक व्यवस्था (मातृका विज्ञान) पर आधारित है । इसके परिचय की शुरुआत "हंस" से होती है । स्वास- प्रस्वास से जीवन क्रम चलता है जिसको सोहं के नाम पुकार गया है और अ से लेकर क्ष तक वर्ण निर्मित होते हैं । यह सदज्ञान प्रदाता है । यह सद्ज्ञान ही मानसिक स्वास्थ्य प्रदान करता है।

मन्त्र तथा मन्त्र की मूल भावना के विषय की जानकारी के साथ साथ हृदय चक्र जिसे कारण कहते हैं, के अष्टदल- अष्ट दिशाओं के अन्दर में आत्मा, गायत्री तथा सप्त ग्रहों का निर्माण कैसे हुआ है ।

ॐ से पंच तत्वों के वर्णों का निर्माण के साथ-साथ पंच प्राणों के निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन किया गया है ।

सभी मातृकाओं से सूक्ष्म शरीर के चक्रों और स्थूल शरीर के अंगों का निर्माण के विकास के प्रक्रिया की जानकारी बताई गई है ।

अतिशय महत्वपूर्ण बात सभी वर्ण अक्षरों मूल भावों की जानकारी के साथ तीनों शरीर निर्माण और शरीर विलय प्रक्रिया की जानकारी होने से साधक मानसिक शरीर में आवश्यक का निर्माण और अनावश्यक शमन कर सकता है ।

गायत्री का अर्थ और जप की वैज्ञानिकता के साथ सद्गुणों के महत्व की जानकारी बताई गई है ।

विनियोग के अर्थ व महत्व के विषय की जानकारी और गायत्री मन्त्र के साथ वर्ण अक्षर के प्रयोग की सरल विधि दी गई है ।

परन्तु एक या तीन माला से ज्यादा जप करने के विषय में कुशल आचार्य से परामर्श तथा अनुमति ले कर ही करें ।

अक्षर से कारण, सूक्ष्म तथा स्थूल शरीरों का निर्माण एवं विलय- 'अक्षर' शब्द का अर्थ- 'अक्षर' शब्द का अन्तिम वर्ण 'र' अग्नि बीज है । इसका स्वभाव प्रकाशित करना और प्रकाशित होना है। अ-क्ष मय संसार पराशक्ति के 'रकार' रूप तेजस से प्रकाशि है। यह 'अक्ष' और उसे प्रकाशित करने वाला 'र' भगवती का अपना ही स्वरूप जो कुछ भी प्रकाश्य एवं प्रकाश है, वह स्वयं परा ही है। **अथाऽक्षराणामधिदेवतायाः ००००००००००००वक्ष्ये जपादेः प्रवरं विधानम्।**[१] संसार को प्रकाशित करने वाली शब्दज्योति मातृका सरस्वती परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी के रूप में अभिव्यक्त होती हुई अर्थ का प्रकाशन करती है। मातृका को 'अक्षर' भी कहा जाता है । समस्त संसार 'अक्ष' से वाच्य है, अर्थात् संसार का निर्वचन अ से लोकर क्ष पर्यन्त मातृकाओं द्वारा ही सम्भव है।

कारण शरीर का निर्माण- सहस्रार चक्र से ब्रह्म नाड़ी का अवतरण होता हुआ हृदय चक्र उदर और वक्ष स्थल के मध्य में बिंदु के रूप में विकसित होती है। यह बिंदु हकार के रूप में अभ्युदय होता है और साथ साथ सकार को विकसित करता है। ह को गायत्री और स को सावित्री, ह को शिव और स को शक्ति नाम से जाना जाता है। हकार से सभी अक्षरों का निर्माण हुआ है। दोनों मिलकर हंस की गति बनाते हैं,

जिससे सोहम् ध्वनि अजपा गायत्री के कारण एक ॐ कार शब्द का निर्माण स्वतः होता है। ॐ का विखंडन अ, उ तथा म के रूप में होता है जिससे सत, रज तथा तम प्रकृति का जन्म हो जाता है। गायत्री के २४ वर्णों का निर्माण यही पर होता है। यह कारणशरीर का प्रथम वलय है, यहीं से द्वितीय वलय में अष्ट अक्षर "अकचटतपयश" का अष्ट भावनाओं को जन्म देने अष्ट वृत्तीयों का निर्माण होकर शुक्ष्म शरीर की ओर गमन करता है।

श्रीप्रपंचसार तंत्र में आत्मा का स्थान हृदय से पंच तत्व, गायत्री और सप्त ग्रहों का निर्माण:- बिन्दु (हं) पुरुष है तथा विसर्ग (सः) स्त्री । इसलिये 'हंसः' पुरुष तथा प्रकृतिस्वरूप है । यह सारा संसार पुरुष तथा प्रकृत्यात्मक हंसस्वरूप है।

वह विसर्गस्वरूपा हल्लेखा शक्ति 'सः' जब स्वयं को पुरुष रूप 'हम्' के रूप में तादात्म्यावस्था में आकर सोऽहम् (सः+अहम्) भाव को प्राप्त करती है । यही 'सोऽहम्' परमात्म नामक महामन्त्र कहलाता है।

एवमेषा जगत्प्रसूतिः ०००००००००००००००० सप्तगुणा त्वियम् ॥26॥[2] संसार को जन्म देने वाली यह हृल्लेखा जब अपने प्रकृति, महद तथा अहंकार तत्वों के साथ 24 भागों में परिणत हो जाती है, तब यह सृष्टि की जननी होने के कारण सविता कही जाती है । भूर्भुवादि चौबीस वर्गों के रूप में परिणत हृल्लेखा शक्ति अपने गायकों की रक्षा करने के कारण गायत्री कही जाती है। जिस प्रकार स्वरों से अतिरिक्त शेष कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग तथा यवर्ग नामक छह वर्गों का कोई अन्य कारण नहीं है, अर्थात् इनका जन्म स्वरों से ही हुआ है, उसी प्रकार मंगल आदि छह ग्रहों का सूर्य के अतिरिक्त कोई अन्य कारण नहीं है, सभी ग्रह सूर्य के ही कार्य है। यह गायत्री शक्ति सात भागों में विभक्त होकर सप्तग्रहात्मिका बनती है। मातकारूपिणी यह हल्लेखा शक्ति सात भागों में विभक्त होकर सूर्य, सोमादि सात ग्रहों का स्वरूप बनती है । सप्तग्रहस्वरूपा बनने पर सोलह स्वरों(अ से अ) से सूर्य, क वर्गसे मंगल, च वर्ग से शुक्र, ट वर्ग से बुध, त वर्ग से बृहस्पति, प वर्ग से शनि तथा य वर्ग से सोम को जन्म देती है ।

ब्रह्म विद्योपनिषद में कारण शरीर से जीवात्मा का रहस्य उदघाटन किया गया है- **सूर्यस्य ग्रहणं०००००००००००००० ध्रुवोर्मध्ये नित्यं ध्यायेत्सदा यतिः॥**[3] हे वत्स! सूर्य का (पूजन हेतु) ग्रहण प्रत्यक्ष यजन (सोऽहम् साधना रूप में) कहा गया है। जल में जल होता है, उसी प्रकार से सायुज्यपद सद्ज्ञान के द्वारा ही प्राप्त होता है । योग के अभ्यास में जो श्रम किया जाता है, उसमें इतने गुण हैं कि इस क्रिया द्वारा उद्योग दुःखों को दूर करने की सतत चेष्टा करनी चाहिए। पर सदा ही इस (ब्रह्मविद्या) के मन्त्र का जप करते हुए योग रूपी चिन्तन के द्वारा तन्मयता को चाहिए। ज्ञान के माध्यम से ही (ब्रह्म का) परम स्वरूप (हंस मन्त्र) प्राप्त किया जाता है । प्राणियों के शरीर में अच्युतरूपी हंस (चेतन जीव) सदा ही प्रतिष्ठित रहता है। हंस ही परम तथा हंस ही शक्ति का स्वरूप है । हंस ही परम वाक्य है, हंस ही वेदों का सार है। हंस ही परम रुद्र है और हंस ही परमात्मा है। सभी देवताओं के मध्य में हंस ही परमेश्वर है। पृथ्वी से लेकर भगवान् शिव तक तथा 'अकार' से लेकर 'क्ष' तक हंस ही वर्ण-मात्राओं की तरह से स्थित है।

पंचब्रह्मोपनिषद में प्रज्ञा और अष्ट दल- **वामदेव महाबोधदायकं पावकात्मकम्।०००००००००समायुक्तमष्टपत्रान्तरस्थितम।**[8]

'वामदेव महान् ज्ञान प्रदायक एवं तेजस्वी अग्नि के स्वरूप, विद्या के आलोक से आलोकित, करोड़ों सूर्यो के सदृश तेजोमय तथा सर्वदा आनन्द स्वरूप हैं। अष्टगान (सामवेद के कहे गये सात गान एवं एक भरत शास्त्र निष्पन्न गीति) से समन्वित मन्द स्वर (आ, आ, आम्) के अधीन तथा सर्वोत्तम आहवनीय (अग्निसदृश), ज्ञान एवं संहार शक्ति से समन्वित उनका (वामदेव का) स्वरूप है। वह शुक्ल वर्ण, तमोगुण युक्त तथा स्वयं ही पूर्णज्ञाता, (जाग्रत् आदि) तीनों धामों के नियामक, तीनों धामों (विश्व, तैजस, प्राज्ञ) से युक्त, सभी को सौभाग्य प्रदान करने वाले, मनुष्यों के सभी कर्मों के फल प्रदाता तथा (अ, क, च, ट,त, प, य, श) इन आठ अक्षरों अथवा आठ क्षरित न होने वाले तत्वों तथा अष्टदल (पंखुड़ियों) से युक्त कमल अर्थात् हृदय रूपी कमल में निवास करने वाले हैं।

कारण शरीर के अष्ट अक्षरों से आठ चित्त वृत्तियों का निर्माण तथा आठ दिशाओं में विस्तार :- ध्यानबिन्दोपनिषद में अष्ट दिशाओं में चेतन के गमन से भिन्न -भिन्न प्रकार की भावनाओं का निर्माण का निर्माण करता है। **अथात्मनिर्णयं ०००००००० भवतीदमेवात्मदर्शनोपाया भवन्ति।**[9]

हृदय स्थल में आठ दल (अ, क, च, ट, त, प, य और श) का कमल है,उसके बीच रेखा वलय बनाकर जीवात्मा ज्योतिरूप होकर अणुमात्र स्वरूप में निवास करता है । वह सर्वज्ञाता,सब कुछ करने वाला है और सब कुछ उसी में प्रतिष्ठित है। उसका ऐसा विचार है कि सभी चरित्रों का मैं ही कर्ता, भोक्ता, सुखी, दुःखी,काना, लँगड़ा, बहरा,गूंगा, दुबला और मोटा हूँ; इस प्रकार उसका स्वतन्त्र व्यवहार रहता है। *उस अष्टदल कमल का पूर्व दिशा वाला दल सफेद रंग का है, उस दल में रहते हुए धर्म और भक्तिभाव में मति (श्रद्धा) रहती है। *जब आग्नेय दिशा के लाल रंग के दल में निवास होता है, तब मति निद्रा और आलस्य से युक्त हो जाती है। जब दक्षिण दिशा के काले रंग के दल में निवास होता है, तब द्वेषभाव और क्रोधी स्वभाव की मति रहती है। *नैर्ऋत्य दिशा के नीले रंग वाले दल में निवास करने पर पाप कर्मों और हिंसक वृत्ति वाली मति रहती है। *जब स्फटिक वर्ण वाले पश्चिम दल में निवास रहता है, तब क्रीड़ा और विनोद में अभिरुचि उत्पन्न हो जाती है। *वायव्यकोण के माणिक्य वर्ण वाले

दल में निवास होने पर घूमने-फिरने और वैराग्य भाव की ओर झुकाव होता है। *जब उत्तर के पीले रंग के दल में निवास करता है, तो सुख-साधन और सजने-संवरने में अभिरुचि रहती है ईशान कोण के वैदूर्यमणि-रंग के दल में रहने पर दान-पुण्य और अनुग्रह करने में अभिरुचि जागती है।

कारण शरीर के अष्ट अक्षरों से सूक्ष्म शरीर के षट्चक्रों, चार वर्णों, आठ दिशाओं तथा सप्त ग्रहों का निर्माण:

१ अ १६ स्वर बीज अक्षरों का निर्माण करते हैं ।अ अक्षर विशुध्दाख्य चक्र में अ से अ: ब्रह्मणत्व से परिपूर्ण होने के कारण लोक कल्याणकारी है, भक्ति भावना वाला और पूर्व दिशा व सूर्य ग्रह है ।

२ क, च और ट अक्षर अनाहत चक्र में क से ठ १२ व्यंजन वर्ण अक्षरों का निर्माण करते हैं। यह क्षत्रियत्व से परिपूर्ण होने के कारण प्रशासनिकता से परिपूर्ण है क्रमश आग्नेय, दक्षिण तथा नैऋत्य कोण और क्रमश: मंगल, शुक्र तथा बुध ग्रह हैं।

३.त और प वर्ण अक्षर मणिपुर चक्र में ड से फ सहित १० व्यंजन वर्ण अक्षरों का निर्माण करते हैं । दिशा पश्चिम और वायव्य, बृहस्पति और शनि ग्रह हैं । वाणिज्य और व्यवसाय की अभिरुचि विकसित करता है-यह वैश्य वर्ण से परिपूर्ण है ।

४. य व्यंजन वर्ण ६ अक्षरों का स्वधिस्ठान चक्र में ब से ल का निर्माण करते हैं । शूद्र वर्ण से परिपूर्ण होने के कारण सेवा कार्य में कुशल है । उत्तर दिशा और ग्रह चन्द्र है ।

५. श व्यंजन वर्ण, ४ वर्ण अक्षरों से मूलाधार चक्र का निर्माण करते हैं । मूलाधार चक्र में व, श, ष और स होते हैं । ईशान दिशा और शुषुम्ना नाड़ी है । शूद्र वर्ण से परिपूर्ण होने के कारण सेवा कार्य में कुशल है।

६. ह और क्ष वर्ण अक्षर से आज्ञा चक्र का निर्माण होता है । यह शिव का क्षेत्र है इसके केंद्र में ॐ है जिसका गुण प्रज्ञा है । यहीं पीयूस ग्रन्थि होती है जिससे स्थूल शरीर के विभिन्न अन्त: स्रावी ग्रंथियों को नियमित और नियंत्रित किया जाता है । षट्चक्रों में स्थित सभी वर्ण अक्षर उदित होते हैं। पञ्च महा प्राणों और पञ्च लघु प्राणों के साथ-साथ सभी 24 तत्वों का भी वाह्य जगत के लिए इन्हीं चक्रों से निर्माण एवं संचालन होता है। इन्हीं चक्रों में पंच तत्व, पंच तन्मात्राऐं, पंच ज्ञानेंद्रिय, पंच कर्मेंद्रियों के साथ मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार, जीव के उपयोग के लिए प्रतिष्ठित होता है। जिसमें मानव को सुख-दु:ख-, भूख-प्यास-, अपना-पराया आदि की अनुभूति होती है।

मानसिक रोगों का कारण- आयुर्वेद का प्रमुख ग्रन्थ चरक संहिता शरीर -1/102 में , आचार्य चरक द्वारा लिखा गया है। **धी धृति स्मृति विभ्रष्ट ०००००००००० विद्यात सर्वदोष प्रकोपनम्।। [13]**

अर्थात् धी - बुद्धि, धृति - धारणा, स्मृति - स्मरण शक्ति, विभ्रष्ट - छोडकर, कुरूते - करना, अशुभ - गलत, कर्म - कार्य, प्रज्ञापराध - आत्मा के विरूद्ध, तं - तब, विद्यात - पैदा, सर्व - सभी, दोष - वात पित्त कफ, प्रकोपनम् - कुपित होना। आयुर्वेद का मत है कि शरीर में वात, पित्त तथा कफ के कुपित होने से रोग होता है। कमर से नीचे वात, कमर से गले तक पित्त तथा गले के ऊपर कफ का स्थान होता है। इसी प्रकार गायत्री के पंचकोशों में से विज्ञानमय कोष के तीनों केन्द्र ही ब्रह्म ग्रन्थि ह्रीं मस्तिष्क मध्य कफ, उदर एवं वक्ष स्थल के मध्य विष्णु ग्रन्थि श्रीं बीज पित तथा वायु के लिए रूद्र ग्रन्थि गुप्त इन्द्रिय के समीप क्लीं बीज है। यह तीनों ही ॐ से नियन्त्रित किये जाते है। जिसका गुण प्रज्ञा है। प्रज्ञा प्राकृतिक रूप से आनन्दमय कोष, विज्ञानमय कोश तथा आज्ञा या मनोमय कोश में संचरण करता है। जो आत्मा की चैतन्यता या आत्म अनुशासन है, वात, पित्त तथा कफ को सन्तुलित बनाये रखता है। गीता में लिखा है कि –

प्रजहाति यदा०००००००००० :स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते- 2।54।।[१४]

अर्थात स्थित प्रज्ञ अपनी आत्मा में ही संतुष्ट रहता है।मर्यादा में रहकर कार्य करता है।

परम पूज्य गुरूदेव पं श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने नव युग के संविधान में कहते है कि **<u>शरीर को भगवान का मन्दिर समझकर आत्म संयम और नियमितता द्वारा अरोग्य की रक्षा करेगें</u>।**

तीन शरीर- सभी वस्तुओं के तीन शरीर स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण होते हैं। १.स्थूल से जीह्वा में स्वाद व पेट में भार रस के रूप से रक्त, मांस, मेध, अस्थि, मज्जा व शुक्र के रूप में होता है। २.सूक्ष्म में प्राण एवं गुण (सत, रज, तम) होता है। ३.कारण में संस्कार (इच्छाएं, भावनाएं, कामनाएं) होती हैं। जिससे स्वास्थ्य का सामान्य क्रम चलता रहता है। कारण शरीर में ॐ की प्रज्ञा परिवर्तन करने में समर्थ होती है।

अक्षरों स्थूल शरीर के विभिन्न अंगों का निर्माण- श्रीप्रपञ्चसारतन्त्र प्रथम पाटल में इस प्रकार दिया है-**अकचटतपयाद्यैः सप्तभिर्वर्णवर्गैर्विरचितमु०००००००००० विद्वद्भिः प्रयासोऽयं विधीयते ।।** [१५]

अ, क, च, ट, त, प और य इन सात वर्गों वाली मातृकाओं से जिसके मुख, बाहु, पाद, मध्यभाग, हृदय और 'क' अर्थात् मस्तक की रचना हुई, समस्त जगत् की अधीश्वरी और समस्त विश्व को जन्म देने वाली वह शाश्वती शारदा आपकी चेतना को विशुद्ध बनाये । भोगमोक्षप्रदायनी शारदा का स्थूल शरीर अवर्ग आदि सात वर्गों में विभक्त 51 मातृकाओं से निर्मित है ।

1.अ वर्ग की अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ,औ, अं और अ:-ये 16 मातृकाएँ भगवती के मुखमण्डल के क्रमश: मौलिक (ब्रह्मरन्ध्र), मुख, दक्षिण नेत्र, वाम नेत्र, दक्षिण कर्ण, वाम कर्ण, दक्षिण नासापुट, वाम नासापुट, दक्षिण कपोल, वाम कपोल, ऊर्ध्व

ओष्ठ, अध: ओष्ठ, ऊर्ध्व दन्तपंक्ति, अध: दन्तपंक्ति, जिह्वा और ग्रीवा ये 16 अंग हैं । 2.क वर्ग की क्रमश: क, ख, ग, घ, ङ, ये पांच मातृकाएँ क्रमश: उनकी दक्षिण बाहु के बाहुमूल, कूर्पर, मणिबन्ध, अंगुलिमूल और अंगुलियों के अग्रभाग हैं । 3.च वर्ग की च, छ, ज, झ और ञ, ये पाँच मातृकाएँ भगवती के वाम बाहु के क्रमश: बाहुमूल, कपूर, मणिबन्ध, अंगुलिमूल और अंगुल्यग्र भाग हैं। 4.टवर्ग की क्रमश: ट, ठ, ड, ढ, और ण, इन पाँचों मातृकाओं से भगवती पराम्बा के दक्षिण पाद की जंघा, जानु (घुटना), गुल्फ (टखना), अंगुलिमूल तथा अंगुल्यग्र का निर्माण हुआ है। इसी तरह त वर्ग की क्रमश: त, थ, द, ध तथा न, इन पाँच मातृकाओं से वाम पाद के उक्त अंगों का निर्माण हुआ है। 5.प वर्ग की क्रमश: प, फ, ब, भ और म ये पाँच मातृकाएँ भगवती के दक्षिण कुक्षि, वामकुक्षि, पृष्ठ, नाभि तथा जठर नामक पाँच मध्य अंग हैं । 6.य वर्ग की क्रमश: य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ तथा क्ष ये दस मातृकाएँ भगवती के हृदय प्रदेश के क्रमश: हृदय, दक्षिण स्कन्ध, वामस्कन्ध, ककुद्(गर्दन) हृदय से दक्षिण कर पर्यन्त भाग, हृदयादि वाम कर पर्यन्त, हृदय से लेकर दक्षिण पाद पर्यन्त भाग, हृदयादि वामपाद पर्यन्त भाग, नाभि से हृदय पर्यन्त भाग और हृदयादि भ्रूमध्य भाग हैं ।

गायत्री का अर्थ और जप का वैज्ञानिक महत्त्व- गायत्री, गय+त्री दो शब्दों से मिलकर बना है। गय का अर्थ प्राण और त्री का अर्थ त्राण (जागरण, संरक्षण, उर्ध्वगमन) है। अर्थात-गायत्री का जप (एक ही वर्तनी को बारम्बार दुहराना) करने से प्राण की उत्पत्ति होती है। यही जप (चिन्तन) जब गुणों के लिए हृदय चक्र(विष्णु ग्रन्थि या विज्ञानमय कोष) में होने लगता है, तो आत्मतत्व की प्राप्ति होने लगती है। गायत्री-शब्दार्थ 'गै शब्दे' इस धातुसे 'शतृ' प्रत्यय करने पर 'गायत्' शब्द बनता है। पश्चात् 'त्रै पालने' धातुसे सम्बद्ध होने पर स्त्री-प्रत्ययान्त 'गायत्री' शब्द निष्पन्न होता है। वेदों में गायत्री शब्दका अर्थ इस प्रकार किया गया है- **'सा हैषा गयाँस्तत्रे०००००००००००००००००००तस्माद् गायत्री नाम ।**[१८] 'गायत्रीने गयों (प्राणों) की रक्षा की थी। प्राण 'गय' कहे जाते हैं। गायत्री ने उन प्राणों ('गयों) की रक्षा की थी, इसलिये इसका नाम गायत्री पड़ा। **सैषा गायत् ..... तस्य प्राणास्त्रायते॥४॥**[१९] यह गायत्री इस दर्शत पद (दर्शनीय चतुर्थ पद) में स्थित है। वह पद सत्य में स्थित है। नेत्र ही सत्य है, सुनिश्चित रूप से नेत्र ही सत्य है। इस कारण यदि दो व्यक्ति आपस में 'मैंने देखा है, 'मैंने सुना है' इस प्रकार का विवाद करते हुए आएँ और उनमें से जो यह कहे कि 'मैंने देखा है', उसी का हमें विश्वास होगा। इस प्रकार वह सत्य बल में प्रतिष्ठित है। प्राण ही बल है, अतः यह सत्य प्राण में स्थित है। इसी कारण सत्य की अपेक्षा प्राण अधिक बलवान् है। इस प्रकार यह गायत्री प्राण में स्थित है। इस गायत्री ने गयों (प्राणों) का त्राण किया। प्राण ही गय है, उन प्राणों का इस (गायत्री) ने त्राण किया। इसीलिए इसे 'गायत्री' कहते हैं। आचार्य जिन ब्रह्मचारियों को इसका उपदेश देते हैं, यह (गायत्री) उन सभी के प्राणों का त्राण करती है। **'गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः।**[२०] द्विज जिससे परब्रह्म परमात्माकी स्तुति करता है, वह गायत्री कहलाती है।' **'गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः।**[२१] स्वषन-क्रियारूप कर्मवाले 'गै' घातुसे 'गायत्री' शब्द निष्पन्न पुराणादि स्मृति शास्त्रों में 'गायत्री' शब्द की एक अन्य निरुक्ति मिलती है। इसके अनुसार गायत्रीको 'गायत्री' इसलिये कहा जाता है कि यह अपने गान करने वाले का त्राण (रक्षण) करती है। **प्रतिग्रहान्नदोषाचपातका-दुपपातकात्। ०००० त्रायते यतः ।।**[२२]'अतः यह गान करनेवाले द्विजका प्रति ग्रह-दोष तथा अन्नदोषसे एवं पातक तथा उपपात कसे त्राण करती है (बचाती है), इसलिये 'गायत्री' कही जाती है। **गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीति स्मृता बुधैः।**[२३] 'यह गायन (जप) करनेवालेका त्राण (रक्षण) करती है, अतः विद्वानोंने इसे गायत्री कहा है।' निम्नाङ्कित वचनोंद्वारा भी इसी अभिप्राय की पुष्टि होती है। **'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीति ततः स्मृता।**[२४] **गातारं त्रायते यस्माद् गायत्री तेन गीयते।**[२५] **'गायन्तं त्रायते पापाद् गायत्रीत्युच्यते हि सा।**[२६] 'अपने गायन करनेवालेकी पापसे रक्षा करने के कारण ही गायत्री कहलाती है।' **'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीत्यभिधीयते।**[२७] 'गायन (जप) करनेवालेका रक्षण करने के कारण गायत्री कही जाती है।

आइन्स्टीन ने $E=MC^2$ का सूत्र दिया, किसी भी ऊर्जा को पदार्थ में और किसी भी पदार्थ को ऊर्जा में बदला जा सकता है। अत: रोगों को भी ऊर्जा(प्राण) में और प्राण को पुनः आत्मा में ब्रह्मविद्या के माध्यम से बदला जा सकता है। इसी प्रकार अपनी क्षमता और पुरूषार्थ के अनुसार योग्य गुरु के मार्गदर्शन में अपने संस्कारों तथा प्रारब्धों में सुधार कर जीवन को सहज और सुगम बनाया जा सकता है। आदतों का सुधार मानवीय अहंकार का सुधार करना है। अहंकार तक सीधी पहुँच साधना के अतिरिक्त और किसी माध्यम से नही हो सकती। मन और बुद्धि को शान्त, मूर्च्छित, तन्द्रित अवस्था में छोड़कर सीधे अहंकार तक प्रवेश पाना ही साधना का उद्देश्य है। गायत्री साधना का विधान भी इसी प्रकार का है। उसका सीधा प्रभाव अहंकार पर पड़ता है। गीता कहती है कि - यो यच्छ्रद्धः स एव

सः, जो अपने सम्बन्ध में जैसी श्रद्धा-मान्यता रखता है वस्तुतः वैसा ही होता है। गायत्री साधना अपने साधक को दैवीय आत्मविश्वास, ईश्वरीय अहंकार(सद्गुण)प्रदान करती है। और वह कुछ ही समय में वस्तुतः वैसा हो जाता है। जिस स्तर पर उसकी आत्ममान्यता है, अपनी स्वयं की आन्तरिक सहमति है उसी स्तर पर चित्त वृतियां रहेंगी। भविष्य में वैसी आदतें, इच्छाएं, रूचियां, प्रवृतियां, क्रियाएं उसमें दीख पड़ेंगी। जो दिव्य मान्यता से ओत-प्रोत होगी।

कौशितकीय ब्राह्मणोपनिषद के अध्याय-३मन्त्र -९ में लिखा है कि-

नो एताना, तद्यथा रथस्यारेषु..... विद्यात्स म आत्मेति विद्यात्।[२९]

प्रज्ञा मात्रा और भूतमात्रा के स्वरूप में कोई भेद नहीं है। उसे इस तरह से जानना चाहिए, जिस प्रकार रथ की नेमि(पहिया) अरों(पहिया और धुरी को जोड़ने वाला भाग) में और अरे रथ की नाभि के आश्रित रहते हैं; उसी प्रकार ही ये समस्त भूत मात्राएँ प्रज्ञा मात्राओं में विद्यमान हैं एवं प्रज्ञा मात्राएँ प्राण में स्थित हैं। यह प्राण ही प्रज्ञात्मा, आनन्दस्वरूप, अजरअमर है। यह न तो अच्छे कर्म से वृद्धि को प्राप्त होता है और न ही बुरे कर्म से छोटा होता है । यह प्राण एवं प्रजा रूप चैतन्य युक्त परब्रह्म ही इस देहाभिमानी पुरुष से श्रेष्ठ कार्य करवाता है। वह ऐसे श्रेष्ठ कृत्य उसी से करवाता है, जिसे वह इन प्रत्यक्ष लोकों से ऊर्ध्व की तरफ ले जाना चाहता है और जिसे वह इन श्रेष्ठ लोकों को अपेक्षा नीचे ले जाना चाहता है, उससे अशुभ कार्य करवाता है।यह आत्मा समस्त लोकों का अधिपति है एवं यही सभी का स्वामी है।इन सभी श्रेष्ठ गुणों से युक्त वह प्राण ही आत्मा है, ऐसा जानना चाहिए। वह प्राण ही हमारी आत्मा है, ऐसा जानना चाहिए। वह प्राण ही हमारा आत्मा है, ऐसा ही जानना चाहिए । अर्थात् श्रेष्ठ गुणों के लिए गायत्री जप करने पर मन के रोग समाप्त हो सकते हैं। यह साधना प्रक्रिया मानव अन्तःकरण का कायाकल्प कर देती है। जिस आत्म-सुधार के लिए उपदेश सुनना और पुस्तक पढना विशेष सफल नही होता था, वह कार्य साधना द्वारा सुविधापूर्वक हो जाता है। यही साधना विज्ञान का रहस्य है।

योग और सद्गुणः योगाधीनं परं ब्रह्म ०००००००० ज्ञानान्मोक्षम-वाप्नुयात्॥[३०] **-** परब्र ह्म योग के अधीन है,महान् तपस्या भी योग के अधीन है, सारी सिद्धियां भी योग के अधीन है,इसलिए योग का आश्रय अवश्य ग्रहण करना चाहिये। योग से ज्ञान प्राप्त होता है, ज्ञान से मोक्ष प्राप्त होता है। पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी अपने १२ नंबर वांग्मय में योग की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि-**मन्त्राभ्यास योगेन ज्ञानं ०००००००००ब्रह्म संसिद्धि कारणं।**[३१] मन्त्र अभ्यास और योग साधना से ही प्राप्त ज्ञान को ज्ञान कहा जाता है । न मन्त्र के बिना योग हो सकता है, न बिना योग के मन्त्र साधना हो सकती है। दोनों के सम्मिश्रण से ही ब्रह्म की सिद्धि प्राप्त होती है। गुरु से प्राप्त मन्त्र का अभ्यास सद्गुणों के लिये किया जाय तो परब्रह्म की सिद्धि से प्रत्येक कार्य सुविधापूर्वक सम्पन्न होता है।इसीलिए सभी लोग गुणों को स्वीकार करते है एवं प्रशंसा करते हैं। **नाहं वसामि वैकण्ठे न ०००००००० तत्र तिष्ठामि नारदः।** भगवान विष्णु ने नारद जी से कहा "न मै वैकुण्ठ मे रहता हूँ, न योगियों के हृदय मे रहता हूँ, मेरा वास वही है जहाँ मेरे भक्त मेरा गुणो के लिए गान करते हैं।" यह पर गुणों के गान का अर्थ भगवान के गुणों के लिए चिंतन और आचरण करने से है। अर्थात जहाँ सद्गुण है वह ईश्वर हैं और जहाँ ईश्वर है वहाँ विजय है।

अग्नि ऋषिः पवमानःपांचजन्य : पुरोहितःतमीमहे महागयं। [३२] - ऐ अग्नि ! ऋषि हमें पवित्र करते हैं और पांचो कोषों में प्रकाश भरते हैं, उनका मार्गदर्शन करते हैं। उन्ही महाप्राण की हम शरण में जाते हैं।

विनियोग का अर्थ एवं महत्व- विनियोग का अर्थ एवं महत्व- वि माने विशेष, नि माने निम्न तथा योग (24 सद्गुणों को अपनाने को 24 योग कहते हैं। का अर्थ जुड़ना होता है। अर्थात् जैसे विद्युत् उत्पादन गृह से ज्यादा पावर की विद्युत् आती है, उसे विशेष प्रकार का ट्रांसफरमर लगाकर निम्न करते हुए अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति हेतु जोड़ दिया जाता है,जो एक प्रकार का विनियोग हुआ। इसी प्रकार ईश्वरीय चेतन धारा प्रकृति को चला रही है। जिस चेतन धारा को ऋषि, छन्द, देवता, बीज और तत्व के माध्यम से निम्न कर शरीर के तत्वों के साथ जोड़ देते हैं। जिसे विनियोग कहते हैं। अथर्व वेद के परिशिष्टसन्ध्यासूत्रव्याख्या-6 में गायत्री के ऋषि, छन्द, देवता आदि को न जानने और जानने से हानि-लाभ-जो गायत्री मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता विनियोग एवं गायत्री के स्वरूप आदि को जानकर गायत्री का जप-अनुष्ठान अथवा पुरश्चरण करते हैं । उसको पुरश्चरण के मध्य में होने वाला जनन और मरण सम्बन्धी सूतक नहीं लगता।'

एतद् ज्ञात्वा तु मेधावी जपं ..... सूतके सति ॥ 'जो बुद्धिमान गायत्री-मन्त्र के छन्द देवतादि को जानकर जप या होम करता है तो उसे मृतक सूतक नहीं लगता क्योंकि वह जापक साक्षात् स्वयम्भू ब्रह्मा तथा परमेश्वर स्वरूप हो जाता है, किन्तु गायत्री के ऋषि, छन्द, देवतादि को जो विधिपूर्वक नहीं जानता उसके लिय ही मैं मृतक सूतक का विधान किया और ऐसे व्यक्तियों को सूतक अवस्था में किये गये दान-यज्ञ और तीर्थादि का फल नहीं मिलता। पंडित श्री राम शर्मा आचार्य जी ने अपने वाङ्गमय गायत्री की दैनिक एवं अनुष्ठान-८.१४ में विनियोग के बारे लिखा है- मंत्र विद्या के अनुसार मंत्रों के विनियोग के पाँच अंग हैं- ऋषि, छन्द, देवता, बीज और तत्व । इन्हीं से मिलकर मंत्रशक्ति पूर्ण बनती है। जिसका पालन विनियोग में किया गया है । ऋषि, छन्द, देवता, बीज

और तत्व- श्रीप्रपंचसारतन्त्रम्-6/2-5 में ऋषि, छन्द, देवता, बीज और तत्व की चर्चा निम्न प्रकार की गई है। **ऋषिर्गुरुत्वाच्छिरसैव धार्यः छन्दोऽक्षरत्वाद्रसनागतं ०००००००० प्रदिष्टा मनुदेवता च ॥2॥**– मन्त्र की साधना में मन्त्र का सर्वप्रथम साक्षात्कार करने वाला 'ऋषि' सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होता है । इसलिये मन्त्र-साधना में सबसे पहले ऋषि का ही स्मरण करके उसे शरीर के सर्वोच्च स्थान सिर पर न्यस्त या स्थापित किया जाता है । छन्दस् अक्षरात्मक होता है और अक्षर का स्थान वाक् है । अत: छन्दस् का न्यास वागिन्द्रिय में किया जाता है । मन्त्र के देवता का ज्ञान बुद्धि से होता है और देवता का स्थान हृदय है । अत: देवता का न्यास हृदय में किया जाता है।

बीज- वेदमंत्र का संक्षिप्त रूप बीज मंत्र कहलाता है। वेद वृक्ष का सार संक्षेप में बीज है। मनुष्य का बीज वीर्य है। समूचा काम विस्तार बीज में सन्निहित रहता है। गायत्री के तीन चरण हैं । इन तीनों का एक-एक बीज 'भूः, भुवः, स्वः' है । इस व्याहृति भाग का भी बीज है-ॐ । यह समग्र गायत्री मन्त्र की बात हुई । प्रत्येक अक्षर का भी एक-एक बीज है । उसमें उस अक्षर की सार-शक्ति विद्यमान है । इसलिए गायत्री-मृत्युञ्जय जैसे प्रख्यात मंत्रों की भी एक-या कई बीजों समेत उपासना की जाती है ।

चौबीस अक्षरों के २४ बीज इस प्रकार हैं- (१) ॐ (२) ह्रीं (३) श्रीं (४) क्लीं (५) हों (६) जूं (७) यं (८) रं (९) लं (१०) वं (११) शं (१२) सं (१३) ऐं (१४) क्रों (१५) हुं (१६) ह्लीं (१७) पं (१८) फं (१९) टं (२०) ठं (21) डं (२२) ढं (२३) क्षं (२४) लूं ।यह बीज मन्त्र व्याहृतियों के पश्चात् एवं मन्त्रभाग से पूर्ण लगाये जाते हैं । 'भूर्भुवः स्वः' के पश्चात् 'तत्सवितुः' से पहले का स्थान ही बीज लगाने का स्थान है । 'प्रचोदयात्' के पश्चात् भी इन्हें लगाया जाता है । ऐसी दशा में उसे सम्पुट कहा जाता है । बीज या सम्पुट में से किसे कहाँ लगाना चाहिए इसका निर्णय किसी अनुभवी के परामर्श से करना चाहिए। २४ तत्वों की शुद्धि के लिए उपर्युक्त २४ बीज हैं जिनके उपयोग से मनोदसा को सुधार जा सकता है।

मंत्र जप के समय ध्यान- विनियोग के अनुसार गायत्री मंत्र का मन में उच्चारण सुनते हुए (जप करते हुए) सद्गुण के रूप में चेतना का अवतरण संबंधित चैतन्य तत्व ग्रहण कर रहे हैं। गायत्री मन्त्र सामान्यतया एक प्रणव और तीन व्याहृतियों के साथ २४ अक्षरों से मिल कर जप करने के लायक ऋषियों के द्वारा माना गया है परन्तु उन्नत ज्ञान, विज्ञान, शक्ति और चेतना के उपयोग के लिए विभिन्न तरीकों का प्रयोग शास्त्रों में मिलाता है। जैसे- "अ" बीजाक्षर के लिए मन्त्र का स्वरूप प्रणव और तीन व्याहृतियों के बाद अर्थात गायत्री मन्त्र के पूर्व तीन बार और अन्त में तीन बार लगा कर एक ॐ लगाया जाता है । इसी प्रकार अ से क्ष तक सभी वर्ण अक्षरों का भी मन्त्र बनाया जा सकता है जो निम्न प्रकार है ।

बीज और संपुट के साथ गायत्री मन्त्र का स्वरूप- ॐ..भूर्भुवः स्वः अ अ अ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् अ अ अ ॐ।

तत्त्व- पिण्ड एवं ब्रह्माण्ड की चेतनाओं-शक्तियों-क्षमताओं एवं संवेदनाओं को आपस में जोड़ते और प्रत्यावर्तन करते हैं ऐसे स्रोत २४ हैं इनमें से एक-एक स्रोत का प्रतिनिधित्व गायत्री का एक-एक अक्षर करते है। इस चेतना के जिन-जिन माध्यमों से अपने अस्तित्त्व का परिचय देने की संभावनाएँ ग्रहण करने तथा अभीष्ट प्रयोजन सम्पन्न करने में आवश्यकता पड़ती है, उन्हें तत्त्व कहा गया है। ऐसे चेतन तत्त्व २४ हैं।

विनियोग पढ़ने का नियम-1. एक विनियोग एक बार पढ़कर मन्त्र की जितनी माला जप करने की आवश्यकता हो, उतना जप करें। उसके बाद दूसरे चक्र में जप करना हो तो उस चक्र से सम्बन्धित विनियोग पढ़कर जप करें।

2. एक गुण के कई विनियोग होते है। उसके पीछे एक वर्ण अक्षर का कई चक्रों में स्थित होना है। जैसे ॐ प्रज्ञा का बीज है, जो सहस्रार चक्र मे होता है। फिर आत्मा हृदय से होकर संसार की ओर आज्ञा चक्र में स्थापित होता है, इसलिए प्रज्ञा के तीन विनियोग होते है। जो चक्रों मे प्राण और चेतना के सन्तुलन के लिए ईश्वरीय योजना के अनुरूप कार्य करता है। 3. इसी प्रकार अन्य गुणों का भी विनियोग अधिक संख्या में होने का कारण समझना चाहिए। 4. दाएँ हाथ में जल (जल की उपलब्धि नहीं होने पर भावनात्मक, मानसिक रूप से क्रिया सम्पन्न करें) लेकर विनियोग एक बार पढ़कर धरती माता को समर्पित करें और फिर मन्त्र का जप करें।

गायत्री मन्त्र से उपासना विधि: षटकर्म, गुरु-गायत्री आवाहन-पूजन, ध्यान-रक्षा कवच, विनियोग–जप, समर्पण, शुभकामना, शान्तिपाठ, सूर्याघ्य, विसर्जन आदि ।

गुणों के लिए जप का महत्व:- अखण्ड ज्योति अप्रैल 1942, पृष्ठ-05 पर लिखा है - "अमेरिका का विश्वास है कि अधिक अस्त्र-शस्त्र उत्पन्न करने से शत्रु को हराया जा सकेगा परन्तु आध्यात्मिक शक्तियों का विश्वास होना चाहिए कि सत्य, प्रेम (सदज्ञान) और न्याय की पवित्र भावनाओं का प्रसार करके सूक्ष्म लोकों की गंदगी को दूर किया जा सकता है । हम न्याय के टैंक, प्रेम के वायुयान और सत्य के बम अपने मस्तिष्क कारखानों में तैयार करें, जिसकी मार से शत्रु शैतान का बल चूर-चूर हों जाएगा । ... हमें अपनी शक्तियों का अधिक से अधिक अंश आध्यात्मिक हथियार बनाने में लगाना चाहिए।"

उपसंहार- भारतीय संस्कृति में मानसिक स्वास्थ्य का आधार अक्षर और सदगुण को माना जाता है। अक्षर हकार से ही सभी वर्ण अक्षरों का निर्माण हुआ है। जिसे कारण, सूक्ष्म तथा स्थूल शरीर के नाम से जाना गया है। सूक्ष्म शरीर को मानसिक शरीर कहा जाता है। जिसमें षट्चक्र आता है इसके अक्षरों को शुद्ध करने लिए गायत्री मंत्र का जप विनियोग कले साथ करने पर मानसिक स्वास्थ्य प्रबन्धित किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ-

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक	प्रकाशक
1.	श्रीप्रपञ्चसारतन्त्रम्-7/1	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
2.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-4/21-26	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
3.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-4/21-26	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
4.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-4/21-26	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
5.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-4/21-26	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
6.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-4/21-26	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
7.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-4/21-26	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
8.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-4/21-26	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
9	पंचब्रह्मोपनिषद-१०-१४	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
10.	चरक संहिता शरीर -1/102	कविराज अत्रिदेव जी गुप्त	चौखम्भा कृष्ण दास अकादमी
11.	गीता-2।54	जयदयाल गोयंदका	गीता प्रेस गोरखपुर
12.	श्रीप्रपंचसार तंत्रम्-1/	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा
13.	योग सूत्र-1/28	हरिकृष्णदास गोयंदका	गीता प्रेस गोरखपुर
14.	अक्षमालिका उपनिषद-५	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
15.	शतपथब्राह्मण १४।८।१५।७।	आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक	श्री वैदिक स्वाति पन्था न्यास
16.	वृहदारण्यकोपनिषद् (५।१४।४)	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
17.	निरुक्त ७।१२।५	प्रो उमाशंकर शर्मा	चौखम्भा विद्या भवन
18.	देवत ब्राह्मण ५।३)		
19.	(वृहद्याज्ञवल्क्यस्मृति ५।४२)	गुरदास जी शास्त्री	गीता प्रेस गोरखपुर
20.	भारद्वाजस्मृति ६।१४६)		
21.	वृहद् यौगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।३५)	गुरदास जी शास्त्री	गीता प्रेस गोरखपुर
22.	स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ६।३)	डा बैज नाथ मिश्र	चौखम्भा संस्कृत सीरीज़ वाराणसी
23.	शिवपुराण, विद्येश्वर संहिता१५॥१६)	डा बैज नाथ मिश्र	गीता प्रेस गोरखपुर
24.	देवीभागवत ११।३।११)	राम कुमार राय	प्राच्य प्रकाशन वाराणसी
25.	शुक्लयजुर्वेद ३६।३)	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
26.	कौशितकीय ब्राह्मणोपनिषद-३/९	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
27.	रुद्रयामलम्-४५/२३-२४	डा रुद्रदेव त्रिपाठी	रंजन पब्लिकेशन
28.	गायत्री की दैनिक एवं अनुष्ठान- 8.6)	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
29.	ऋग्वेद-९/६६.१०	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
30.	गायत्री महाविद्या का तत्त्व दर्शन-10.12)	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
31.	(अथर्ववेदपरिशिष्ट सन्ध्यासूत्रव्याख्या-६)		
32.	श्रीप्रपंचसारतन्त्रम्-6/2-5	डा रामचन्द्र पुरी	चौखम्भा संस्कृति प्रतिष्ठा